ISSN No. 2394-9996

# दिनकर के साहित्य में दलित, पीड़ित तथा शोषितों का विमर्श

**डॉ.एम.आर. पटेल**
**आनंदराव धोंडे**
**महाविद्यालय,**
**कडा जि. बीड.**

न जाने कितने अरमानों को ह्रदय से लगाकर शोषितों, पीड़ितों ने स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय येागदान दिया था। लेकिन स्वातंत्र्योत्तरकाल में उनके अरमान और सपने मिट्टीमोल हुए। आज भी अस्पृश्यों, दलितों पर सरेआम अत्याचार हो रहे हैं, शोषक वर्ग शोषण कार्य में बराबर लगा हुआ है और शोषित की स्थिति दिन-प्रतिदिन दयनीय होती जा रही है।

कवि दिनकर के मन में हमेशा अन्याय तथा असमानता के सामने आक्रोश रहा है। अन्याय शासन का हो या समाज का उन्हें पसंद नहीं है। आजादी के बाद भी दलित, अछुत तथा नीच मानी जानेवाली जातियों का शोषण हुआ है।

वस्तुतः एक सफल कवि अपने ही युग का चितेरा नही होता, बल्की वह गौरवपुर्ण अतीत को वर्तमान युग की आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में देखता और समझता है, फिर उसे भावी युग की मनोरम कल्पनाओं से युक्त कर शब्दों में बाँधता है। दिनकर की `रश्मिरथी` में सर्व प्रथम जातिभेद की नीति की भर्त्सना की गयी। कवि दिनकर में महाभारत के उपेक्षित पात्र के चरित्र को आधुनिक युग की समस्याओं को दृष्टिगत रखते हुए एक नितांत मौलिक नया रूप प्रदान किया। जो आज के व्यक्ति के लिए दिव्य प्रेरणा का स्त्रोत सिद्ध हो सकता है।

कवि ने कर्ण के चरित्र के माध्यम से दलित, पीड़ित तथा दबे हुए समाज के शक्तिशाली लोगों का प्रतिनिधत्व करवाया है। आज भी भारतीय समाज में दलित समाज के सदस्य बिना कसुर के सालों तक मुसिबतें उठाते हैं। कर्ण उसीका प्रतीक है। कर्णद्वारा समाज के भेदभाव, वर्णव्यवस्था तथा उसे बढ़ानेवाले लोगों पर व्यंग्य है। कर्ण तो सभी कलाओं में पारंगत है, फिर भी वह अर्जुन के साथ नहीं लड़ सकता। क्योंकि अर्जुन भरतवंश का राजपुत्र है। कर्ण को गोत्र, वंश, जाति के बारे में पुँछनेपर वह कहता है।

``जाति-जाति रटते जिनकी पूँजी केवल पाखंड।

मै क्या जानूँ जाति? जाति है ये मेरे भुजदंड।``

जो मनुष्य अपने पुरूषार्थ तथा बाहुबल पर विश्वास रखता है, वह भाग्य को भी पलट सकता है। असल में उँच-नीच का भेद, जाति वंश की परंपराएँ कायरों के लिए होती हैं। सत्कर्मो में लीन सदाचारी व्यक्ति अपने चरित्रबल से ही अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करता है। कर्ण दलित पात्र होकर भी निष्कलंक, स्वर्णिम अलोक से परिपूर्ण है, उसके चरित्र में कहीं कोई भी दाग नहीं है। कर्ण अपराजेय आत्मविश्वास का धनी है। मित्रता का ऐसा आदर्श संभवत: समूचे भारतीय इतिहास में नहीं मिल पायेगा। कर्ण का रोम - रोम दुर्याधन के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता है। वह मित्रता को एक अमूल्य रत्न बतलाते हुए कहता है कि मैत्री की सुखद छाया धरती ही नहीं, बैकुंठ से भी अधिक शीतल एवं सुखदायी है। वह कहता है -

``मुझकों न कहीं कुछ पाना है,
केवल ऋण मात्र चुकाना है।``

माता कुंती चाहती है कि कर्ण पांडवों का साथ दे, लेकिन वह अपने सत्पथ से हिल नहीं पाता। यही उसकी महानता है। कर्ण ने मित्रधर्म की भाँति युद्ध में भी धर्म का पालन किया है। जहाँ तक उसके चरित्र का प्रश्न है, उसने आद्योपांत साधनों की महत्ता स्वीकारी है। उसके समक्ष जय-पराजय का कोई महत्व नहीं है। कर्ण केवल शुरवीर ही नहीं अपितु दानवीर भी है। कवच-कुंडलोंका दान करने पर भी उसके तेजमय मुखमंडलपर प्श्चाताप की धूमिल-सी रेखा भी नहीं दिखाई देती।

कर्ण के चरित्र की पराकाष्ठा यही है कि वह लौकिक स्वार्थो, वैभव-विलासके प्रलोभनों से दूर है। कर्ण के चरित्र की एक महत्वपूर्ण विशेषता उसका अमित धैर्य और अनुकरणीय सहनशीलता है। फिर भी क्रोधी परशुराम ऐसे प्रिय को शाप देकर स्वयं भी दुखी होते हैं। कर्ण आरंभ से ही अर्जुन का बैरी रहा है। उसका लक्ष्य केवल अर्जुन से प्रतिशेध है।

समग्रत: कहा जा सकता है कि कर्ण एक अपराजेय शुरवीर, महान तेजस्वी, एक आदर्श मित्र, धर्मावलंबी, निरीह पद-दलितों का नेता सब कुछ था। उसका चरित्र धर्म और शील की आभा से देदीप्यमान रहा है। कर्ण आजीवन उन्हीं मनुष्य निर्मित सामाजिक परंपराओं से जुझता रहा है। जातिगत भेदभाव की समस्या आज के भारतीयों के लिए नितांत अपरिचित नहीं है। कवि ने कर्ण को दलितों एवं शोषितों के प्रतिनिधि के रूप में चित्रित कर उस सनातन हिंदू समाज की रूढ़िवादिता पर प्रहार किया है।

देश की स्वाधीनता के साथ ही सामाजिक विषमता हटाने को कवि ने प्रथम स्थान दिया है। आजादी के बाद भी शोषण, असमानता, भेदभाव, अत्याचार आदि से उन्हे घृणा थी। दिनकरजी अपनी `दिल्ली` कविता में शासकों की मस्ती के बारे

में कहते हैं। `हे दिल्ली तुम ब्रिटैन की दासी बन गयी हो। तुम वैभव से इठलाती हो, मदमाती हुई अपने साज सिंगार में छलक रही हो। तू चाहे कितनी भी कठोर हो, लेकिन ये लाखों भारतवासी शोषण की चंगुल में फँसे हैं जिनकी रोटी और वस्त्र छीन लिये गये हैं।

``तू न ऐंठ मदमाती दिल्ली,
मत फिर यॉ इतराती दिल्ली।
अविदित नहीं हमें तेरी,
कितनी कठोर है छाती दिल्ली।।``

कवि का कहना है कि सच्चा भारत उस रेशमी नगरी में नहीं है, वह तो गाँव - देहात की धूल तथा खालिहानों में हैं। एक तरफ किसान मजदूर तथा गरिबों का खून बह रहा है, जिसके छींटे तेंरी दीवारपर लगे हैं। गरीब अपनी झोपड़ी में भुख से रो रहा है, तब तू परदेसी की बाहों में हाथ डालकर इतरा रही है। कवि ने भारतवासियों की दूर्दशा और दिल्ली के माध्यम से शोषण, शासक तथा परदेसीयों की कटु आलोचना की है। कवि को गरीबों की रोटी, उनकी मेहनत, श्रम का बदला, अन्न वस्त्र आदि की हमेशा चिंता रही है। उन्हें उम्मीद है कि यह विषमता साम्यवाद से ही दूर हो सकती है। दलितों के खून-पसीने पर अमीर लोग अपनी झगमग सजाए हुए हैं। सब शांति का नारा चला रहे हैं और भ्ीतर से पृथ्वीपर अशांति का जहर भी वही फैला रहे हैं। गरीबों की हालत ऐसी कर दी गयी है, कि चमढ़ीपर सुई चले फिर भी वे विरोध न करे। सब सहते रहे। यही दलित, पीड़ित, शोषित जीवन की कहानी है।

कवि भारत की नींव समझे जानेवाले किसान कों प्रस्तुत करते हैं। जेठ महिने की कड़ी धूप हो या पूस माह की छंड से उसे आराम नहीं हैं। वह खुद अपने बैलों के साथ रात-दिन पसीना बहाता है। फिर भी उसे दो जुन की रोटी तथा वस्त्र आसानी से नहीं मिलते। साथ ही मजदूर लोग जीवन को एक शाप समझकर जीते हैं।

कवि दिनकर शोषण एवं अत्याचारपर आधारित पूँजीवादी व्यवस्थाका विरोध करते हैं। कवि मानव कल्याण के पक्ष में हैं और उनकी सहानुभूति दीन-दलित एवं शोषित के प्रति है, क्योंकि यही वर्ग समाज में अधिक अन्याय का शिकार हुआ हैं। कवि `हुँकार` में कहते हैं।

``श्वानों को मिलता दूध-वस्त्र, भूखे बालक आकुलाते हैं,
माँ की हड्डी से चिपक ठिठुर जाडों की राज बिताते हैं।
युवती के लज्जा वसन बेच जब ब्याज चुकाये जाते हैं,
मालिक जब तेल फुलेलों पर पानी-सा द्रव्य बहाते हैं।``

आज की पूँजीवादी व्यवस्था सामान्य जन तथा सर्वहारा वर्ग को त्रस्त किए हूए हैं। `व्यालपर विजय` कविता में श्रीकृष्ण की बाँसुरी उस जहरीली व्यवस्था के विनाश की पुकार है। कवि को समाज के हर पीड़ित व्यक्ति के प्रति सहानुभूति एवं प्रेम है। साथ ही कवि ने नारी के तमाम समस्याओं को उठाया है।

इस पुँजिवादी व्यवस्था में आर्थिक विषमता एवं शोषण अपनी चरमसीमातक पहुँचने के कारण कवि उन पुँजीपतियों के वैभव का नाश करने के लिए क्रांति का निमंत्रण देते हैं। कवि गरीबों, असहायों, दीन-दुखियों को साहस बंधाते हुए कहते हैं कि सामने डरवश, भयवश झूकने की जरूरत नहीं है। स्वभिमान का जीवन जीना सीखों। कवि कहते हैं।

``गौरव की भाषा नयी सीख, भिखमंगों की आवाज बदल।
सिमटी बाहों को खोल गरूड़, उड़ने का अब अंदाज बदल।
स्वाधीन मनुज की इच्छा के आगे पहाड़ हिल सकते हैं,
रोटी क्या? ये अंबर वाले सारे सिंगार मिल सकते हैं।।``

निष्कर्ष: कहा जा सकता है कि कवि पुँजीपतियों के विरूद्ध बगावत का झंडा खड़ा करते हैं। दलित, पीड़ित, शोषित, मासुम बच्चों तथा निस्सहाय स्त्रियों के दु:ख की करूण कहानी कहते हैं और प्रतिक्रियावादी शक्तियों के प्रलोभनों का भंडाफोड़ करते हैं। साथ ही विगत और वर्तमान युगों को एक संस्कृतिक भूमि खड़ी करने का प्रयास किया है।

**<u>संदर्भ ग्रंथ सूचि-</u>**


1. कवि दिनकर के साहित्य में दलित पीड़ित तथा शोषितां का चित्रण - डॉ. डाहयाभाईजी रोहित
2. दिनकर का व्यक्तित्व - डॉ. एस. प्रमीला
3. रश्मिरथी - डॉ. कृष्णदेव शर्मा
4. हिंदी के प्रतिनिधि कवि - डॉ. विजयप्रकाश मिश्र
5. विचार और निष्कर्ष - वासुदेव